जैन धर्म में निहित पर्यावरणीय संचेतना

डॉ0 उमेश तिवारी

जैन धर्म का पर्यावरण के प्रति शेष रूप से वनस्पति जगत एवं जीव जगत के प्रति कितनी सजगता रही है, इसका बोध इस तथ्य से होता है कि प्रत्येक तीर्थंकर एक चैत्य वृक्ष एवं एक जीव प्रतीक के रूप में पूज्य है। जैन धर्म में पर्यावरण चेतना का सबसे अद्‌भुत सिद्धान्त कर्मदान का है जिसमें जीविकोपार्जन के लिए कुछ व्यवसायों को वर्जित माना गया है।

संतुलित पर्यावरण का अर्थ जीवन और जगत् को पोषण देना है। इस धरती पर जो कुछ दृश्यमान या विद्यमान है, वह पोषित हो, पुष्ट हो, यही पर्यावरण का अभीष्ट है। और यह दायित्व चेतनाशील मनुष्य का है। किन्तु वैज्ञानिक सफलताओं से मनुष्य में आत्मविश्वास और अभिमान की एक ऐसी मनोदशा उत्पन्न हो गयी है, जिसके कारण प्रकृति के ज्ञान संचय और मानवीकरण करने के बजाय उसका शोषण करना प्रारम्भ कर दिया है, जिसके फलस्वरूप प्राकृतिक पर्यावरण बड़ी तेजी से असंतुलित एवं दूषित होता जा रहा है। अतः मानव जाति के अस्तित्वके लिए यह आवश्यक हो गया है कि पर्यावरण को प्रदूषण से मुक्त करने के लिए प्रयत्न अविलम्ब प्रारम्भ हो। यह शुभ लक्षण है कि पर्यावरण को प्रदूषण मुक्त करने की चेतना आज समाज के सभी वर्गों में जगी है और इसी क्रम में यह विचार भी उभर कर सामने आया है कि विभिन्न धार्मिक परम्पराओं में पर्यावरण को प्रदूषण मुक्त रखने के ऐसे कौन से निर्देश हैं, जिनको उजागर करके पर्यावरण को प्रदूषण से मुक्त रखने के सन्दर्भ में मानव समाज के विभिन्न वर्गों की चेतना को जागृत किय